शोध संचयन
A Refereed Research Journal
And a complete Periodical dedicated to
Humanities & Social Science Research
ISSN 0975 1254 (PRINT)
ISSN 2249-9180 (ONLINE)
www.shodh.net
Vol. 11
Issue 1&2
15 July 2020

महाकवि भवभूति की काव्यकृतियों में सामाजिकौचित्य

बीज शब्द :

भवभूति, संस्कृत साहित्य, भारतीय समाज, औचित्य

साहित्य और समाज एस दूसरे के पूरक हैं। साहित्य यदि समाज से सामग्री प्राप्त करता है तो समाज भी साहित्य से दिशा प्राप्त करता है। वास्तविक साहित्य तो वही है जो समाज को प्रतिबिम्बत करे तथा भावी समाज के निर्माण के लिए आधार प्रदान करे। यह तभी सम्भव है, जब साहित्य में सामाजिकौचित्य का पालन किया जाये। इस अधयाय में भवभूति के रूपक में समाजगत-औचित्य पर प्रकाश डाला गया है। भवभूति स्वयं समाज का एक अंग थे अत: निश्चित रूप से वह भी समाज से प्रभावित थे इसीलिए उन्होंने समाज को अपने साहित्य का एक अभिन्न अंग बनाया।

*****

डा. वन्दना कुमारी
एसो०प्रो०-संस्कृत
राजकीय स्नातकोत्तर महाविद्यालय
हमीरपुर (उ0प्र0)

महाकवि भवभूति की काव्यकृतियों में सामाजिक औचित्य

महावीरचरित : देषौचित्य स्थानादि के अनुरूप वर्णन को देशौचित्य कहते हैं। देश का औचित्य काव्यार्थ को अत्यधिक हृदय-स्पृहणीय बना देता है, जैसे सज्जनों का व्यवहार परिचय बढ़ाने वाला होता है।[1] महावीरचरित के प्रथम अंग का आरम्भ भगवान् कालप्रियनाथ के यात्रेत्सव प्रसंग से होता है[2], जिससे उनकी भगवान शिव के प्रति अनन्य भक्ति अभिव्यक्त होती है। इसी प्रकार ताड़का नामक राक्षसी के वर्णन में सीता, उर्मिला आदि कन्यायों के मन में भय उत्पन्न कर एक अपूर्व औचित्य को प्रकाशित किया है क्योंकि कुलीन जाति की कन्यायें इस प्रकार अंतड़ियों में पिरोई कपालमाला, हड्डियों का कंकण आदि गहनों के शब्द से आकाष को शब्दायमान करने वाली, पीत तथा वान्त रक्तकर्दम से, भयानक स्तनों से भीषणकाय, दर्प से घूमने वाली ताड़का नामक राक्षसी[3] को देखकर भयग्रस्त हो ही जायेगी, अतः यहाँ देशौचित्य है।

जटायु आगमन के वर्णन में कवि ने उसी के अनुरूप शब्दावली का प्रयोग कर मानो इस प्रसंग को सहृदय पाठकों के समक्ष मूर्त्तिमान कर दिया यथा-पंखों को समेटने और फैलाने के कारण दिशायें कभी दिखाई देती हैं और कभी लुप्त हो जाती है। मेघ चूर्ण-चूर्ण होकर पाले की स्थिति में पहुँच जाता है। जिसकी बिजली स्थायिनी बन गयी है। सामने वाले वाली शिलायें चकनाचूर हो गयी है। इस प्रकार जटायु के पंख चल रहे हैं, जिससे उनका आना अनुमत हो रहा है।[4] इस प्रसंग से जटायु का अलौकिक उत्कर्ष ध्वनित हो रहा है और यह भी ज्ञात होता है कि यह बलवान राक्षसराज रावण से लोहा ले सकता है।

सप्तम अंक में विभीषण राम से कहते है कि ये हिमालय के पवित्र शिखर हैं, जिसके चरणों को सुर-सिन्धु धो रही है और जो कर्पूरखण्ड की तरह स्वच्छ हैं और जहाँ पुरातन मूर्जवल्कल सुशोभित हो रहे हैं। यहाँ अध्यात्म विद्या के प्रेमी तत्त्वज्ञान से अज्ञान को दूर करने वाले ब्रह्मज्ञानियों के स्वभाव में सुन्दर तेज बिखर रहे हैं।[5] यहाँ विभीषण के इस कथन से हिमालय की नैसर्गिक दिव्यता प्रकट हो रही है।

भवभूति ने प्रस्रवण पर्वत की शोभा का वर्णन इतना सुन्दर किया है जैसे वह पर्वत यहाँ के निवासी हो यथा-यही है प्रस्रवण नाम वनमधयस्थ पर्वत, जिसकी कन्दरायें सटे हुए वृक्ष की निरन्तर छाया से हरी वनावली से युक्त गोदावरी द्वारा मुखरित की जाती हैं, और जिस पर सर्वदा बरसते हुए मेघ श्यामल छाया फैलाते हैं। यही तो पंचवटी है।[6] इस वर्णन से प्रस्रवण पर्वत का दृश्य सहृदय के समक्ष के समक्ष उपस्थित हो जाता है अतः यह वर्णन दशौचित्यपूर्ण है। इसी प्रकार लंका दहन[7] में वर्णित शब्दावली से ऐसा प्रतीत हो रहा है कि वास्तव में लंका दहन हमारे समक्ष उपस्थित हो गया है, अतः यहाँ भी देशौचित्य है।

कुलौचित्यः- महाकवि ने महावीरचरित में नायक-नायिका तथा अन्य पात्रें की चारित्रिक उदात्तता के लिए क्षेमेन्द्रोक्त कुलौचित्य का सम्यक् सन्निवेष किया है। कुल के वर्णन में उसकी उत्कृष्टता आदि का वर्णन ही कुलौचित्य है। आचार्य क्षेमेन्द्र के अनुसार जैसे सद्वंश का सम्बन्धी मनुष्यों की बहुत उत्कृष्टता का कारण है और लोकप्रिय होता है, उसी तरह कुलमूलक औचित्य का वर्णन काव्य की उत्कृष्टता का कारण और सहृदयहृदयाभिमत होता है।[8]

महावीर के नायक-नायिका राम तथा सीता यशस्वी तथा प्रख्यात कलोत्पन्न हैं तथा सूर्यवंशी हैं, जो अपनी उदात्तता, प्रजावत्सलता और प्रतिज्ञापालन आदि औदात्त गुणों से युक्त होने के कारण इतिहास प्रसिद्ध है।

भवभूति ने सर्वप्रथम अपने कुल की अतिशय उदात्तता का वर्णन कर स्पष्ट कर दिया है कि वे किसी सामान्य कुल के नहीं है। उनका कुल अत्युच्च है। उनके पूर्वज कृष्णयुजर्वेद की तैत्तिरीय शाखा को पढ़ाने वाले थे उनका गोत्र कश्यप है।

उनके पूर्वज चरणगुरु थे अर्थात् वेद की शाखाओं को पढ़ने वाले वेदज्ञों के गुरु थे वे पंक्तिपावन ब्राम्हण थे। परम्परानुसार पंक्तिपावन सर्वश्रेष्ठ ब्राह्मण माने जाते हैं। जो ब्राह्मण, यजुर्वेद, सामवेद और अथर्ववेद में पारंगत होते हैं, उन्हें ही पंक्तिपावन ब्राह्मण कहा जाता है। वे पंचाग्निहोत्र करते हैं। वे चन्द्रायण आदि व्रतों को करने वाले थे, वे सोमपीथी थे। उनकी प्रसिद्धि उदुम्बर के रूप में थी। वे वेदज्ञ, वेद प्रवचनकर्त्ता तथा ब्रह्मवेत्ता थे।[9] वे शब्दरूपी तत्व के ज्ञानार्थ निष्काम भाव से ष्टाडंग वेद के अध्ययन में प्रेम रखते थे। इष्ट तथा पूर्व के लिए धान सङ्ग्रह करते थे, वंश-परम्परा के लिए जीवन धारण करते थे।[10]

अतः अपने कुल के अनुरूप भी भवभूति भी पद वाक्य प्रमाण यज्ञ थे।[11]

यहाँ भवभूति ने अपने कुल की महत्ता का प्रतिपाद किया है। इससे काव्य की गम्भीरता और गूढ़ता का भान होता है क्योंकि काव्य का कवि उत्स होता है। उसमें कवि के व्यक्तित्व का प्रतिबिम्ब होता है, अतः काव्य की उत्कृष्टता को बढ़ाने के कारण यह वर्णन औचित्यपूर्ण है। इसी प्रकार वशिष्ठ इक्ष्वाकुवंशीय राजाओं के गुरु है। सप्तऋषियों में उनकी गणना की जाती है। वे

ब्रह्मर्षि की संज्ञा से अलंकृत थे। वे धर्मगुरु तथा शिक्षा गुरु थे। शतानन्द अंगिरा ऋषि के पुत्र थे जनक के पुरोहित थे। सदाचारी गृहस्थ और याज्ञवल्क्य के शिष्य थे। वे राजपुरोहित के धर्म को पूर्णतः जानते थे और निभाते थे। इसलिए उनकी प्रशंसा वशिष्ठ भी करते है –

न तस्य राष्ट्रम् व्यथते न रिष्ठयति न जीर्यति
त्वं विद्वान् ब्राम्हणों यस्य राष्ट्रगोपः पुरोहितः।।[12]

विश्वामित्र की गणना सप्तऋषियों में की जाती है। वह दशरथ और जनक दोनों के ही पूज्य थे।[13] वे राम के गुरु थे।

रावण महर्षि विशर्वा का पुत्र था। वह वेदज्ञानी था, पराक्रमी था तथा लंका का अधिपति था। इस प्रकार महावीरचरित में पात्रें का चयन उनकी चारित्रिक विशेषताओं के अनुरूप होने के साथ-साथ उनके उच्च कुल की भी अभिव्यंजना प्रस्तुत करता है अतः यहाँ कुलौचित्य है।

व्रतौचित्यः– महावीरचरित में व्रतौचित्य का सम्यक् वर्णन हुआ है। काव्य में पात्र, देश, काल आदि के अनुसार ही व्रताचरण का आधान किया जाता है। आचार्य क्षेमेन्द्र के अनुसार प्रतापाचरण के वर्णन से काव्यार्थ प्रशंसनीय होता हुआ सहृदयों के मन को अपूर्व आहलाद प्रदान करता है।[14]

महावीर प्रसाद के प्रथम अंक में ही सूत्रधार विश्वामित्र द्वारा होने वाले यज्ञ की सूचना देता है कि विश्वामित्र यज्ञ करेंगे।[15] इससे यह ध्वनित होता है कि वह राम के पराक्रम को अस्त्रों से बढ़ाने और संसार की भलाई के निधान सीता को मिलाने के लिए रावणवंश विनाश के उपयुक्त पात्र राम को धनुष और अनुज सहित अपने आश्रम ले आये हैं क्योंकि यज्ञ सम्पादन से राक्षस विघ्न अवश्य उत्पन्न करेंगे अतः उनके विनाश हेतु राम और लक्ष्मण पहले से ही आश्रम में उपस्थित हैं। अतः यज्ञानुष्ठान रूपी व्रत का पालन होन से व्रतौचित्य है।

अन्यत्र जब विश्वामित्र राम को ताड़का के वध का आदेश देते हैं तो पहले भगवन्! स्त्री खल्वियम्।[16] यह कहकर राम उसके वध में हिचकिचाते हैं परन्तु पुनः विश्वामित्र के ''त्वरस्व वत्स! थ्कं न पश्यसि ब्राम्हणजनस्य संघातमृत्युमग्रतः''[17] कहने पर गुरु के आदेशानुसार ताउका का वध कर देते हैं। यहाँ राम के द्वारा गुरु आज्ञापालन रूपी व्रत का पालन करने से व्रतौचित्य है।

पुनः दिव्यास्त्र प्रदान अवसर पर राम की उक्ति कि यही मेरी प्रार्थना है कि ये दिव्यास्त्रसम्प्रदाय हमें लक्ष्मण के साथ प्राप्त हो।[18] यहाँ राम की अनुजप्रेमरूपी व्रत की अभिव्यंजना होने से व्रतौचित्य है।

उत्तररामचरित : सामाजिकौचित्य देशौचित्यः–

उत्तररामचरित के द्वितीय अंक में गोदावरी नदी के तट का वर्णन औचित्यपूर्ण है। वासन्ती कहती है कि गोदावरी क तटवर्ती प्रदेश में हरे-भरे जंगल हैं। उनमें विशाल तथा छायादार वृक्ष हैं। उन वृक्षों की छाया में अनेक पशु-पक्षी एकत्रित हो गये हैं। गर्मी की प्रचण्डता को वृक्षों की छाया नहीं रोक पा रही है। अतः पक्षीगण अपने पंजों से जमीन को खोद रहे हैं। ऐसा करने से वे भूमि के गर्म ऊपरी सतह को हटाकर नीचे से ठण्डी सतह को अपने बैठने के लिए अनावृत कर रहे हैं। वृक्षों के ऊपर रेंगने वाले कीड़े-मकोड़े भी गर्मी का अनुभव कर वृक्षों की छाल के भीतर घुस रहे हैं। वृक्षों के ऊपर कबूतर और जंगली मुर्गे उष्णता से व्याकुल होकर कुल-कुल शब्द नाद कर रहे हैं। जंगली हाथी भी भीषण गर्मी से व्याकुल हैं। गर्मी के कारण उनकी खोपड़ी खुजलाने लगी है। अतः वह वृक्षों से अपनी खोपड़ी रगड़ रहे हैं। हाथी की इस क्रिया से वृक्ष हिलने लगे हैं तथा हिलने से उनके पुष्प झड़ने लगे हैं। ये पुष्प झड़कर गोदावरी के प्रवाह में गिर रहे हैं। गोदावरी में वृक्षों के आपतन को देखकर ऐसा प्रतीत हो रहा है मानो तटाश्रित वृक्ष फूल चढ़ाकर गोदावरी की मधयाहन पूजा कर रहे हैं।[19] यहाँ महाकवि भवभूति ने गोदावरी के तटवर्ती वन प्रदेश का जैसा वर्णन किया है, उससे प्रतीत होता है कि भवभूति प्रतिदिन इस वन प्रदेश में आते थे और यहाँ के वृक्षों तथा जीव-जन्तुओं का अध्ययन करते थे। इस वर्णन में गोदावरी के तटवर्ती वन-प्रदेश का चित्र सामने उपस्थित हो जाता है। अतः यह वर्णन देशौचित्यपूर्ण है।

उत्तररामचरित के इसी अंग में दण्डकारण्य का वर्णन औचित्यपूर्ण है। राम वनवास काल में दृष्टट दण्डकारण्य को देखकर अभिज्ञानपूर्वक कहते हैं कि यह दण्डकारण्य ही है। इसका एक भाग कोमल तथा हरित घास-वृक्षलतादि से नीलवर्ण का दिखाई दे रहा है। स्थान-स्थान पर पर्वतीय झरणों की झंकार सुनाई पड़ रही है, जिससे सभी दिशाएँ झंकृत हो रही हैं। इस वन में ऋषियों के अनेक आश्रम हैं। यहाँ अनेक नदियाँ प्रवाहित हो रही हैं। इसमें अनेक गड्ढ़े हैं। यह प्रदेश अनेक दुर्गम मार्गों से युक्त है।[20]

महाकवि भवभूति ने यहाँ दण्डकारण्य के कोमल तथा कठोर उभयविधा दृश्यों को चित्रित किया है। एक तरु वन प्रदेश कोमल तथा उद्दीपक है वहीं दूसरी तरु कठोर तथा भयावह। परन्तु संस्कृत साहित्य की परम्परा में अधिकांश कवियों ने प्रकृति के कोमल तथा उद्दीपक पक्षों को उभारा है। यहाँ महाकवि

भवभूति ने प्रकृति के उभयविधा पक्षों के चित्रण में जो संतुलन किया है, वह काव्य के सौष्ठव को बढ़ाता है। अतः यह वर्णन देशौचित्यपूर्ण है।

उत्तररामचरित के चतुर्थ अंक में वाल्मीकि आश्रम का वर्णन देशौचित्य की दृष्टि से विचारणीय है। आश्रम में बहुत संख्या में अतिथिगण आये हुए हैं। उनके भोजनार्थ चावल तथा बेरमिश्रित पालक की सब्जी बनाई गई है। चावल को अत्यधिक स्वादिष्ट बनाने के लिए उसमें घी डाला गया है। घी मिश्रित चावल तथा बेर मिश्रित पालक के शाक की भीनी-भीनी सुगन्ध चारों ओर फैली हुई है। चावल से निकला हुआ मांड वहीं जमीन पर बह रहा है। आश्रम में पालित सद्यः प्रसूता मृगी अपनी मृग के साथ मांडपान कर रही है। यहाँ मृग अपनी मृगी के प्रति विशेष प्रीति का प्रदर्शन कर रहा है। पहले मृगी मांडपान करती है, फिर उसके पीने से बचे मांड को मृग पीता है। यह मृगी के प्रति मृग के अतिशय प्रेम का सूचक है। इस प्रकार अतिथियों, आतिथ्य सामग्रियों और आतिथ्यकार्य में लगे हुए लोगों तथा पशु-पक्षियों के कारण वाल्मीकि आश्रम रमणीय लग रहा है।[21] यहाँ वाल्मीकि आश्रम का आश्रमौचित्य वर्णन होने से देशौचित्य है।

षष्ठ अंक में लव-चन्द्रकेतु युद्धभूमि के वर्णन में[22] भी देशौचित्य स्पष्टतया परिलक्षित हो रहा है।

कुलौचित्य

महावीरचरित के समान उत्तररामचरित के नायक-नायिका भी राम तथा सीता सूर्यवंशी है तथा उच्चकुलोत्पन्न हैं।

उत्तररामचरित में प्रथम अंक के प्रकृत श्लोक[23] में सविता को दशरथ के वंश के प्रवर्तक बताकर महाकवि भवभूति ने इस कुल की महनीयता की प्रतीति कराई है, अतः यहाँ कुलौचित्य है।

महर्षि वशिष्ठ के सन्देश [24] में यज्ञ ही सूर्यवंशियों का सर्वोत्तम धान है, यह कहकर भवभूति ने सूर्यवंश के राजाओं की प्रजावात्सल्यता तथा एतदर्थ सर्वस्वत्यागप्रियता की अभिव्यक्ति करायी है। इससे इस कुल की यशस्वी परम्परा की सहृदयाव्हादकारी अभिव्यंजना होती है अतः यहाँ कुलौचित्य है।

अन्यत्र राम-लक्ष्मण वनगमन के अवसर पर ये कहा जाना कि राम ने वानप्रस्थ व्रत को बाल्यावस्था में धारण कर लिया था।[25] इस कथन में इक्ष्वाकुवंशीय राजाओं के व्यवस्था में वानप्रस्थाश्रम जाने को जो वर्णन किया गया है, उससे इस कुल की महत्ता अभिव्यंजित होती है। भगवान् मनु ने भी कहा है कि ''व्यवस्था में पौत्र के दर्शन होने पर वानप्रस्थ लेना चाहिए।''[26]

इस प्रकार हम देखते हैं कि यह देशकाल मालती और माधाव मे प्रणय अंकुरित करने में अत्यधिक सहायता करते हैं। मालती और माधाव का यह प्रणयांकुर शनैः शनैः विकसित होने लगता है।

तृतीय अंक में अपने पिंजड़े को तोड़कर भयानक सिंह निकल पड़ता है। वह मदयन्तिका की ओर झपटता है।[27] वीर युवक मकरन्द साहस के साथ अपनी तलवार लेकर सिंह से लड़ता है और मदयन्तिका के प्राणों की रक्षा करता है।[28] सिंह के भीषण प्रहार से वह मूर्च्छित हो जाता है।[29]

इस प्रसंग के द्वारा कवि मकरन्द के शौर्य तथा उत्साह को तो अभिव्यक्त करता ही है, साथ ही मदयन्तिका भी इस वीरकार्य से प्रभावित होती है और उसके प्रति अनुरक्त हो जाती है।[30] पंचम अंक में कपालकुण्डला और अघोरघण्ट देवी कराला के मंदिर में मालती की बलि देना चाहते हैं परन्तु इसी समय माधव वहाँ पहुँच जाता है और वह मालती की प्राणरक्षा करता है। इसी योजना के द्वारा कवि मालती और माधव के प्रेम को और प्रगाढ़ कर देता है। अतः यहाँ देशकाल के अनुरूप होने से मालती-माधाव का पुनः मिलन होता है। इसी प्रकार श्मशान वर्णन[31] तथा रात्रिवर्णन[32] आदि स्थलों पर भी कथा के अनुरूप देशौचित्य का वर्णन प्रशंसनीय है।

कुलौचित्यः- प्रकरण के नायक तथा नायिका दोनों ही उच्चकुलोत्पन्न है। माधव विदर्भराज के लब्ध प्रतिष्ठित मंत्री देवरात का पुत्र है। मालती भी पद्मवतेश्वर के मंत्री भूरिवसु की पुत्री है। अतः भवभूति ने उच्चकुलोत्पन्न नायक-नायिका का अपने प्रकरण में वर्णन किया है। अतः यहाँ कुलौचित्य है।

व्रतौचित्यः- कामन्दकी की आज्ञा से बुद्धरक्षिता,सौदामिनी,मकरन्द तथा अवलोकिता, मालती-माधव मिलन में सहायता प्रदान करते हैं। जिससे उनकी आज्ञापालन व्रतौचित्य परिलक्षित होता है। वस्तुतः इन्हीं के प्रयासों के फलस्वरूप मालती और माधव का मिलन होता है ओर अनेक उतार-चढ़ाव के बाद इनका मिलन प्रकरण को सुखान्त बना देता है अतः आज्ञा पालन रूपी व्रतौचित्य के कारण ही प्रकरण का सुखान्त हुआ अतः यहाँ व्रतौचित्य कितना उचित है।

सन्दर्भ :-

1 देशौचित्येन काव्यार्थः ससंवादेन शोभते।
परं परिचयाष्टांसी व्यवहारः सतामिव।। औ0वि0च0का0 27

2 भगवतःकालप्रियनाथस्य यात्रयामार्यमिश्राः समादिष्टान्ति।
म0च0,पू0 2

3 अन्त्रोतबृहत्कपालनलकक्रूरक्कणत्कङ्कण-
प्राग्रप्रेङ्खितभूरिभूषणखैराघोषयन्त्यम्बरम्।
पीतोच्छ्दितरक्तकर्दमघनप्राग्भारघोरोल्लल-

द्वयालोलस्तनभारभरैववपुदर्पो)तं धावति।। म0च01/35

4 पर्यायात्क्षणदृष्टनष्टककुभः संवर्तविस्तारयो-
र्नीहारीकृतमेघमोचितधातु व्यक्तस्फुरद्विद्युतः।
आरात्कीर्णकणात्कणीकृतगुरुग्रावोच्चश्रेणयः
श्यैनेयस्य बृहत्पतत्र्यातयः प्रख्यापयन्त्यागमम्।। वही 5/1

5 एते ते सुरसिन्धुधौतदृषदः कर्पूरखण्डोज्ज्वलाः
पदा जर्जरभूर्जवल्कलभृतो गौरीगुरोः पावनाः।
तत्त्वालोकनिरस्तमोहमसामधयात्मविद्याजुषां
यत्र ब्रह्मविदां निसर्गमधुरं जागत्ति सौम्यं महः।। म0च07/27

6 अयमविरलानोकहनिवहनिरन्तरस्निगधानीलपरिसराण्य-
परिण)गोदावरीमुखकन्दरःसततमभिष्यन्दमानमेधामेदुरित-
नीलिमा जनस्थानेमधयगोगिरिः प्रस्रवणो नामः। इयं च पंचवटी। वही पृ0203

7 भ्रान्तीः सप्ताधिकानां प्रविदधादरुणैरर्चिषां चक्रवालै-
र्द्राग्वीराणामलक्ष्यप्रसूतिरतिसमुत्तप्तरौक्मालयेषु।
अर्धाष्लुष्टापसर्पद्रजनितचरभटोद्गाठकल्पान्त शंक
लंका प्रौढो हुताष्ठाः सह परिदलितोब्धोस्विकूटेन लीढे।। वही 6/4

8 कुलोपचितमौचित्यं विष्ठोषोत्कर्षकारणम्।
काव्यस्य पुरुषस्येव प्रियं प्रायः सचेतसाम्।। औ0वि0च0का0 28

9(क) तत्र केचिट् तैत्तिरीयाः काश्यपाश्चरणगुरवः पंक्तिपावनाः म0मा0पृ5
पंचाग्नयो धृतव्रताः सोमपीथिन उटुम्बरनामानो ब्रह्मवादिनःप्रतिवसन्ति। म0मा0,पृ010
(ख)

10 ते श्रोत्रियास्तत्वविनिश्चययाय भूरि श्रुतं शाश्वतमाद्रियन्ते। वही0, पृ0 6
इष्टाय पूर्ताय च कर्मणेर्थान् दारानपत्याय तपोर्थमायुः।।

11 (क) पदवाक्यप्रमाणज्ञो भवभूतिः। उ0च0,पृ0 4
(ख)
(ग)

12 म0च0 3/16

13 जनकानां रघूणां च सम्बन्धाः कस्य न प्रियः। वही 1/57
यत्र दाता गृहीता च कल्याणप्रतिभूर्भवान्।।

14 काव्यार्थः साधुवादार्हः सद्ब्रतौचित्यगौरवात्। औ0वि0च0का0 29
सन्तोष्ठानिर्भरं भक्तया करोति जनमानसम्।।

15 सतु भगवान् दीक्षिष्यमाणः कौशिको विश्वामित्र

16 म0च0, पृ0 34

17 वही, पृ0 36

18 एष प्रव्होस्मि भगवन्नेष विज्ञापना च नः।
दिव्यास्त्रसम्प्रदायोयं लक्षमणेन सहास्तु मे।। वही 1/47

19 कण्डूलद्विपगण्डपिण्डकष्ठाणोत्कम्पेन संपातिभि-
धर्मस्रंसितबन्धानैः स्वकुसुमैरर्चन्ति गोदावरीम्।
छायापस्किरमाणर्विष्किरमुखत्याकृष्टकीत्वचः उ0रा0 2/9
कूजत्क्लान्तकपोतकुक्कुटकुलाः कूले कुलायद्रुमाः।।

20 स्निग्धाश्यामाः क्वचिदपरतो भीषणाभोगरूक्षाः
स्थाने-स्थाने मुखरकुकुभो झांकृतैर्निरर्झराणाम्।
एते तीर्थाश्रमगिरिसरित्गर्तकान्तारमिश्राः
स्दृश्यन्ते परिचितभुवो दण्डकारण्यभागाः।। उ0रा0 2/14

21 नीवरौदनमण्डमुष्ठणमधारं सद्यः प्रसूताप्रिया-
पीतादभ्यधिकं तपोवनमृगः पर्याप्तमाचामति।
गन्धोन स्फुरतामनागनुसृतो भक्तस्य सर्पिष्मतः
कर्कन्धूफलमिश्रशाकपचनामोदः परिस्तीर्यते।। उ0रा0 4/1

22(क) झणश्झणितकंकणक्वणितकिंकिणीकं धनु-
धर्वनद्गुरुगुणाटनीकृतकरालकोलाहलम्।
वितव्य किरतोः शरानविरतरूरच्चूडयो-
र्विचित्रमाभिवर्तते भुवनभीममायोधानम्।। वही, 6/1

(ख) विजृम्भितं च दिव्यस्य मंगलाय द्वयोरपि।
स्तनयित्नोरिवामंद्रं दुन्दुभेर्दुन्दुभायितम्।। वही, 6/2

(ग) अवदग्धाकर्बुरतिकेतुचामरैरपयातमेव हि विमानमण्डलैः।
दहति धवजांशुकपटावलीमिमां नवकिंशुकद्युतिसविभ्रमः शिखी।। वही,6/4

23 येषां कुलेषु सविता च गुरुर्वयं च। उ0रा0, 1/9

24 तस्माद्यशो यत्परम् धानं वः।। वही, 1/11

25 पुत्रसंक्रान्तलक्ष्मीकैर्यद्वृद्वेक्ष्वाकुभिर्धृतम्।
धुतं बाल्ये तदार्येण पुण्यमारण्यकव्रतम्।। वही, 1/22

26 गृहस्थस्तु यदा पश्येद् बलीपलतमात्मनः।
अपत्यस्यैव चापत्यं तदारण्यं समाश्रयेत्।। मनुस्मृति 1,3

27 बुद्धरक्षिताः-परित्रयधवम्। एषा नः प्रियसख्यमात्यनन्दनस्य भगिनी
मदयन्तिकैतेन दुष्टशार्दूलेन हतविद्रावितपरजिनाभिभूते। मा0मा0 ,पृ0 67

28 दृढ़ च पशुनाहतो व्यसुरसौ कृतश्चामुना।। वही, 3/18

29 कथं व्याकलनखरप्रहारनिःसृतरक्तनिवहः क्षितितलविष्ठाक्तखंगलतावष्टटम्भनश्चलः
वही, पृ0 70
संभ्रान्तमदयन्तिकावलम्बितस्ताम्यतिवत्सो मकरन्दः।।

30 करालायतनाच्चायमुच्चरन्करुणधवनिः।
विभाव्यते ननु स्थानमनिष्टटानां तदीदृशाम्।। वही, 5/21

31 पर्यन्तप्रतिरोधिमेदुरधानस्त्यानं चिताज्योतिष्ठा-
मौज्जवल्यं परभागतः प्रकटयत्याभोगभीमं तमः।
संसक्ताकुलकेलयः किकिलाकोलाहलैः संमदा-
दुत्तालाः कटपूतनाप्रभृतयः सांराविणं कुर्वते।। म0मा0, 5/11

32 व्योम्नस्तापिच्छगुच्छावलिभिरिव तमोवल्लरीभिर्व्रियन्ते
पर्यन्ताः प्रान्तवृत्या पयसि वसुमती नूतनेमज्जतीव।
वात्यासंवेगविष्वग्विततवलयितस्कीतधूम्याप्रकाशं
प्रारम्भेपि क्रियामा तरुणयति निजं नीलिमानं वनेषु।। वही 5/6

◆◆◆